भेद विज्ञान—वीतराग विज्ञान

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

आत्मा शरीर से भिन्न है। यह भेदविज्ञान है। निश्चय दृष्टि से मैं शुद्ध आत्मा हूं और व्यवहार दृष्टि से नाम संज्ञा वाला हूं। व्यवहार जगत में हम जीते हैं। हम समाज में रहते हैं, समाज में परस्पर सम्बन्ध रहता है। व्यवहार जगत के शुद्धिकरण से मानव निश्चय जगत में जाता है। आत्मा शुद्ध बुद्ध मुक्त है। आत्मा शुद्ध है, वह कर्त्ता नहीं है। उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। जैसा हम कार्य करते हैं, वैसा प्रभाव आत्मा पर पड़ता है। आत्मा कर्मानुसार विभिन्न गतियों में संचरण करता है। जन्म—मरण का चक्र दुःख का कारण है। आत्मा कर्म के कारण आवृत्त रहता है। कर्म का आवरण हटते ही आत्मा शुद्ध रूप में स्थित हो जाता है। आत्मा का भाव ज्ञाता और द्रष्टा का है। वह सच्चिदानन्द है। जगत नियन्ता व्यवस्थित शक्ति है। उसे ईश्वर ब्रह्म सर्वशक्तिमान कहा गया है। जगत निर्दोष सब मेरा दोष। जगत में जितने भी प्राणी हैं, सब निर्दोष हैं। लेन—देन शेष है, जो मैं दे रहा हूं वह कर्जा उतार रहा हूं। यह पूर्वजन्म के कार्य का निपटारा है।

भेद विज्ञान यथार्थ दृष्टिकोण है। सादा जीवन उच्च विचार यथार्थ दृष्टिकोण का मूलमंत्र है। यहां के ऋषियों, मुनियों, महर्षियों ने एकान्त में रहकर कन्दमूल फल खाकर नदियों और झरनों का पानी पीकर स्वस्थ तन, मन के द्वारा जो चिन्तन दिया है वह भेद विज्ञान है। भगवान बुद्ध, भगवान महावीर जैसे महापुरुषों ने जो यथार्थ दृष्टिकोण दिया है, आज पूरा भारत उसी पर चल रहा है। इन महापुरुषों ने राजमहल को त्यागकर साधारण जीवन जीने का निर्णय लिया। इन्होंने संसार के सत्य को खोजा और सामान्य जनता में इसका उपदेश किया। उन्हीं के दिखाये हुए मार्ग पर आज पूरा विश्व चल रहा है।

मानव जीवन बड़ा ही अमूल्य है। मानव जीवन को पाकर यदि कोई इसको व्यर्थ में गंवा दे तो उसका जीवन निरर्थक ही रहता है। **'बड़े भाग्य मानुष तन पावा'** अर्थात् मनुष्य का शरीर बड़े

पुण्य कर्म के पश्चात् ही प्राप्त होता है। मानव जीवन बड़ा ही दुर्लभ है। चौरासी लाख जीव योनियों में यह सर्वश्रेष्ठ है। मानव एक पंचेन्द्रिय प्राणी है। चेतना का पूर्ण विकास मानव में हुआ है। एक इन्द्रिय वाले जीव, दो इन्द्रिय वाले जीव, तीन इन्द्रिय वाले जीव, चार इन्द्रिय वाले जीव इन्द्रिय विकल कहलाते हैं, क्योंकि संपूर्ण इन्द्रियां इन जीवों में नहीं है। पंचेन्द्रिय प्राणियों में मानव ही सर्वश्रेष्ठ है। पशुओं में भी पांच इन्द्रियां होती हैं, किन्तु सोचने विचारने की क्षमता उनमें नहीं होती। मानव और पशु में यही अंतर है कि मानव ज्ञान संपन्न है। इसलिए मानव सर्वश्रेष्ठ है। मानव तन पाकर यदि मानव में मानवता का विकास न हो तो वह पशु से भी वदतर है।

जैन धर्म में तप का विधान है। जैन साधना पद्धति में साधना की दो महत्वपूर्ण विधियां है– संवर और निर्जरा। कृत कर्मों की विशुद्धि करना, उनका निर्जरण करना अर्थात् कर्म शरीर को प्रकम्पित कर उससे कर्म परमाणुओं को पृथक करना निर्जरा की प्रक्रिया है। संवर और निर्जरा से वीतरागता प्राप्त होती है। आत्मा के साथ कर्म पुद्गलों का बन्धन अथवा चिपकाव न हो, उसके लिए कर्मपुद्गलों को आकृष्ट करने वाले आत्मपरिणामों का संवरण करना, उनका निरोध करना संवर है। ये दोनों पद्धतियां आत्मशोधन की प्रक्रियाएं हैं। कर्मों के नष्ट हो जाने पर साधक वीतराग हो जाता है। वीतरागता का परिणाम है राग–द्वेष से मुक्ति। वीतराग को छोड़कर ऐसा कौनसा प्राणी है जो अपने आप को पूर्ण पवित्र और निर्मल कह सके? इसलिए सहज ही प्रश्न होता है कि यह अपवित्रता, कलुषता तथा अस्वस्थता क्यों? इसका एक ही उत्तर है कि हर प्राणी कर्मों के जाल में गूंथा हुआ है। अनादिकाल से वे कर्म बन्धन प्राणिमात्र को संसार के प्रवाह में प्रवाहित कर रहें हैं। कर्मों का अनादिकालिन प्रवाह जब नष्ट होता है तो जीव वीतरागता को प्राप्त करता है।

मिथ्यात्व के कारण दृष्टि मलीन हो जाती है। सब कुछ विपरित दिखने लगता है। दृष्टि के मलीन होने से हम गन्तव्य तक नहीं पहुंच सकते। मिथ्या दृष्टि के कारण चौरासी लाख यौनियों में भ्रमण होता है। आस्रव अविरति है। अविरति का अर्थ है, धार्मिक क्रिया में रुचि न होना, पूजा–पाठ, सामायिक, ईश्वर भक्ति में रूचि न होना। अपने अस्तित्व का ज्ञान न होना अविरति है। खाओ–पीओ और मस्त रहो के प्रति रुचि अधिक होती है। सम्पत्ति, पद प्रतिष्ठा में

लिप्त रहना अविरति है। इसे छोड़ना विरति है। प्रमाद का अर्थ है आलस्य। आलस्य ही मनुष्य के शरीर का सबसे बड़ा शत्रु है।

आत्मा के साथ क्रोध, मान, माया, लोभ, राग और द्वेष का रहना कषाय कहलाता है। राग और द्वेष आत्मा का घात करते हैं। ये कर्मों को बढ़ाते हैं। राग–द्वेष संसार के कारण है और वीतराग संसार से मुक्त होना है। मुक्त होने के लिए राग–द्वेष को जीतकर समता भाव धारण करना पड़ता है। मन, वचन और काया को प्रवृत्ति को योग कहते हैं। वाणी के द्वारा हम एक–दूसरे से सम्पर्क करते हैं। इसलिए मनुष्य को हित, मित वचन बोलना चाहिए। सभी के साथ मधुर सम्बन्ध बनाना चाहिए। वाणी से सबको वश में किया जा सकता है। मानव शरीर के द्वारा प्रवृत्ति करता है। यदि प्रवृत्ति शुभ होती है तो भाव शुभ होते हैं। भेद विज्ञान वीतरागता का विज्ञान है।